प्रकाशन तिथि : 26 अगस्त 2017, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 36, अंक 2, कुल पृष्ठ 28

ISSN 2454 - 5163

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र,
कुन्थलगिरि (महा.)

वीतराग–विज्ञान (409)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह–सम्पादक :

डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :

ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क–सूत्र :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए–4, बापूनगर, जयपुर – 302015

फोन :(0141)2705581, 2707458

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी	:	7200
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	**10200**

स्वभाव का अवलम्बन कर

हे जीव ! तुझमें ऐसी कौनसी अपूर्णता है जो तू बाह्य साधनों को ढूंढता है ? साधन होने की परिपूर्ण शक्ति तुझमें है; तेरा आत्मा ही सर्व साधन सम्पन्न होने पर भी तू बाह्य में अपना साधन क्यों ढूंढता है? जैसे– किसी के यहाँ कड़ाही आदि साधन न हों तो वह पड़ौसी के यहाँ मांगने जाता है; किन्तु जिसके घर में सर्व साधन हों वह दूसरों के यहाँ किसलिये मांगने जायेगा? उसी प्रकार चैतन्यस्वभाव स्वयं सर्वसाधन सम्पन्न है; उसमें ऐसी कोई अपूर्णता नहीं है कि उसे दूसरों से साधन मांगना पड़े।

प्रश्न : वीतरागता प्रगट करने के लिये वीतरागता के निमित्त तो ढूंढने पड़ेंगे न? पूर्वकाल में अन्य जीवों के लिये जो वीतरागता के निमित्त हुये हैं, उन निमित्तों को हम प्राप्त कर लें तभी तो वीतरागता होगी?

उत्तर : अरे भाई ! ऐसा नहीं है; यह तो निमित्ताधीन दृष्टि है। निमित्ताधीन दृष्टि छोड़कर अपने स्वभाव साधन को ढूंढ। जहाँ तू स्वभाव–साधन कर लेगा वहाँ तुझे निमित्तों को नहीं ढूंढना पड़ेगा। स्वभाव में साधन शक्ति की ऐसी अपूर्णता नहीं है कि अन्य साधन प्राप्त करना पड़े। 'अन्य जीवों को जो वीतरागता के निमित्त हुए उन पदार्थों को मैं प्राप्त कर लूँ तो उनके निमित्त से मुझे वीतरागता हो', – यह दृष्टि ही विपरीत है, उसे स्वभाव की ओर नहीं ढलना है; किन्तु अभी तो उसे निमित्त प्राप्त करना है। इसलिये साधन होने की शक्ति वाले अपने स्वभाव को वह वास्तव में मानता ही नहीं है। ज्ञानी तो अपने स्वभाव सामर्थ्य को जानकर, उसका अवलम्बन लेकर उसी को साधन बनाता है। – आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 540–541

वीतराग–विज्ञान

वीतराग–विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग–विज्ञान का , घर–घर होय प्रसार।।

वर्ष : 36 (वीर नि. संवत् – 2543) 409 अंक : 2

परनति सब जीवन की...

परनति सब जीवन की, तीन भाँति वरनी।
एक पुण्य एक पाप, एक राग–हरनी ।। टेक ।।
तामे शुभ–अशुभ अंध, दोय करैं कर्मबंध।
वीतराग परनति ही, भव–समुद्र तरनी ।।1 ।।
जावत शुद्धोपयोग, पावत नाहीं मनोग।
तावत ही करन जोग, कही पुण्य करनी ।।2 ।।
त्याग शुभ क्रियाकलाप, करो मत कदाच पाप।
शुभ में न मगन होय, शुद्धता विसरनी ।।3 ।।
ऊँच–ऊँच दशा धारि, चित्त प्रमाद को विडारि।
ऊँचली दशातैं मति, गिरो अधो धरनी ।।4।।
भागचंद या प्रकार, जीव लहै सुख अपार।
याके निरधार स्यादवाद की उचरनी ।।5।।

– कविवर पण्डित भागचंदजी

ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में
पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट द्वारा आयोजित

20वाँ आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

(रविवार 17 सितम्बर से रविवार 24 सितम्बर 2017 तक)

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के निर्देशन में आयोजित इस शिविर में विशेषज्ञ विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं के माध्यम से जैनदर्शन के विविध विषयों का गहराई से अध्ययन/अध्यापन कराया जायेगा। अत: अन्य शिविरों से पृथक् यह शिविर जैनदर्शन के सूक्ष्म अध्ययन के इच्छुक जिज्ञासुओं के लिये एक स्वर्ण अवसर होगा।

आप सभी को शिविर में पधारने हेतु हार्दिक आमंत्रण है।

नोट : कृपया आवासादि की समुचित व्यवस्था हेतु अपने आगमन की पूर्व सूचना अवश्य देवें।

संपर्क सूत्र –

श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.)

फोन नं.– 0141-2705581, 2707458

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

सम्पादकीय

कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन

(गतांक से आगे ...)

दर्शन-ज्ञान-चारित्र

(१६-१७-१८)

जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं तेसिमधिगमो णाणं।
रागादीपरिहरणं चरणं एसो दु मोक्खपहो ।।
तच्चरुई सम्मत्तं तच्चग्गहणं च हवइ सण्णाणं।
चारित्तं परिहारो परूवियं जिणवरिंदेहिं ।।
जं जाणइ तं णाणं जं पिच्छइ तं च दंसणं णेयं।
तं चारित्तं भणियं परिहारो पुण्णपावाणं ।।

(हरिगीत)

जीवादि का श्रद्धान सम्यक् ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।
रागादि का परिहार चारित यही मुक्तीमार्ग है।।
तत्त्वरुचि सम्यक्त्व है तत्ग्रहण सम्यग्ज्ञान है।
जिनदेव ने ऐसा कहा परिहार ही चारित्र है।।
जानना ही ज्ञान है अरु देखना दर्शन कहा।
पुण्य-पाप का परिहार चारित्र यही जिनवर ने कहा।।

जीवादि पदार्थों का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है और उन्हीं का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है तथा रागादि भावों का त्याग सम्यक्चारित्र है – बस यही मोक्ष का मार्ग है।

तत्त्वरुचि सम्यग्दर्शन है, तत्त्वग्रहण सम्यग्ज्ञान है और मोह-राग-द्वेष एवं परपदार्थों का त्याग सम्यक्चारित्र है – ऐसा जिनेन्द्र देवों ने कहा है।

जो जानता है, वह ज्ञान है; जो देखता है, वह दर्शन है और पुण्य-

पाप के परिहार को चारित्र कहा गया है; क्योंकि **पुण्य और पाप दोनों ही रागभावरूप हैं और चारित्र वीतरागभावरूप होता है।**

ये गाथायें क्रमश: समयसार की गाथा १५५वीं, अष्टपाहुड़ : मोक्षपाहुड़ की गाथा ३८वीं एवं ३७वीं हैं।

इनमें सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र का विविध प्रकार से विवेचन है।

पहली गाथा समयसार की होने से उस पर आत्मख्याति नामक संस्कृत टीका भी उपलब्ध है; शेष दो गाथाओं पर प्रामाणिक संस्कृत टीका उपलब्ध नहीं है।

प्रथम गाथा की आत्मख्याति टीका में आचार्य अमृतचन्द्र सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनों को ही ज्ञान पर घटित करते हैं; क्योंकि पूर्व में यह कहते आये हैं कि ज्ञान ही मोक्ष का हेतु है। उक्त कथनों से इस कथन की संगति बैठाने का ही यह सफल प्रयास है।

उनके कथन का भाव इसप्रकार है –

''वस्तुत: मोक्ष का कारण सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र है। उनमें जीवादि-पदार्थों के **श्रद्धानस्वभावरूप ज्ञान का होना – परिणमना सम्यग्दर्शन है,** जीवादि पदार्थों के **ज्ञानस्वभावरूप ज्ञान का होना – परिणमना सम्यग्ज्ञान है** और **रागादि के त्यागस्वभावरूप ज्ञान का होना – परिणमना सम्यक्चारित्र है।** इसप्रकार सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र – तीनों ही एक ज्ञान का ही भवन है, परिणमन है; इसलिए ज्ञान ही परमार्थत: मोक्ष का कारण है।''

उक्त संदर्भ में स्वामीजी का स्पष्टीकरण इसप्रकार है –

श्रद्धान स्वभाव से ज्ञान का होना – ऐसा जो टीका में कहा है, वहाँ ज्ञान का अर्थ आत्मा है। उस प्रकरण में आत्मा न कहकर ज्ञान कहने का प्रयोजन रागादि विकार से रहित आत्मा का ज्ञानरूप परिणमन है।

जीवादि पदार्थों के ज्ञानस्वभाव से ज्ञान का होना परिणमना ज्ञान है।

देखो, यहाँ शास्त्रज्ञान की बात नहीं है, वह तो परलक्ष्यी ज्ञान है। यहाँ तो आत्मा के ज्ञान का अन्तर में स्व-संवेदनरूप स्व का प्रत्यक्ष ज्ञानरूप होने को ज्ञान कहा है। **ज्ञानस्वभावी भगवान आत्मा जो अपने स्वरूप से ज्ञानरूप परिणमता है, उसे ज्ञान कहते हैं और वह वीतरागी पर्याय है।** भाई ! त्रिलोकीनाथ वीतराग सर्वज्ञदेवों ने इन्द्रों व गणधरों के बीच धर्मसभा में जो कहा है – वही यह बात है।

आत्मा का जीवादि पदार्थों को जाननेरूप परिणमना या निजज्ञायक के लक्ष से ज्ञानपर्यायरूप परिणमना ही सम्यग्ज्ञान है। पुण्य-पाप से रहित शुद्ध निज ज्ञायक को जाननेवाला अर्थात् ज्ञायक के लक्ष्य से परिणमन करनेवाला ज्ञान भी पुण्य-पाप के भावों से रहित है। भाई ! यह सम्यग्ज्ञान की पर्याय वीतरागी पर्याय है।

अब कहते हैं कि **रागादि के त्यागस्वभाव से ज्ञान का होना परिणमना चारित्र है।**

देखो, पाँच महाव्रतों को पालने का परिणाम, अट्ठाईस मूलगुणों के पालन करने का परिणाम राग है। अव्रत का परिणाम पापभाव है, व्रत का परिणाम पुण्यभाव है। इन दोनों के त्यागभावरूप ज्ञान का अर्थात् आत्मा का होना परिणमना धर्म है। यहाँ **आत्मा ज्ञानस्वभाव से अन्तर में एकाग्र होकर परिणमता है, वह सहज ही रागरूप नहीं होता।**

यह परिणमन ही राग के अभावरूप है तथा यही सम्यक्चारित्र है।

इसप्रकार सम्यग्दर्शन, ज्ञान व चारित्र – तीनों एक ज्ञान का ही भवन (परिणमन) है। इसलिए ज्ञान ही परमार्थ (वास्तविक) मोक्ष का कारण है।'

आचार्य जयसेन तात्पर्यवृत्ति में इस गाथा में समागत विषयवस्तु को निश्चय-व्यवहार की संधिपूर्वक इसप्रकार स्पष्ट करते हैं –

''जीवादि नौ पदार्थों का विपरीताभिनिवेश रहित श्रद्धान **सम्यग्दर्शन** है; इन्हीं पदार्थों का संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय रहित सुनिश्चित ज्ञान **सम्यग्ज्ञान** है और उक्त सम्यग्दर्शन-ज्ञानपूर्वक रागादि का परिहार **सम्यक्चारित्र** है - यह व्यवहार मोक्षमार्ग है।

भूतार्थनय से जाने हुए उन्हीं नवपदार्थों को शुद्धात्मा से भिन्न अवलोकन करना अर्थात् उन पदार्थों से भिन्न अपने आत्मा का अवलोकन करना **निश्चय सम्यक्त्व** है, भिन्न जानना **निश्चय सम्यग्ज्ञान** है और इन दोनों पूर्वक रागादि विकल्पों से रहित होकर **निज शुद्धात्मा में रहना निश्चय सम्यक्चारित्र** है और यही निश्चय मोक्षमार्ग है।''

इसीप्रकार का भाव पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में भी प्राप्त होता है, जो इस प्रकार है -

जीवाजीवादीनां तत्त्वार्थानां सदैव कर्त्तव्यम्।
श्रद्धानं विपरीताभिनिवेश विविक्तमात्मरूपं तत्।।२२।।
कर्त्तव्योऽध्यवसायः सदनेकान्तात्मकेषु तत्त्वेषु।
संशयविपर्य्ययानध्यवसायविविक्तमात्मरूपं तत्।।३५।।
चारित्रं भवति यतः समस्तसावद्ययोगपरिहरणात्।
सकलकषायविमुक्तं विशदमुदासीनमात्मरूपं तत्।।३९।।

जीवाजीवादि तत्त्वार्थों का विपरीताभिनिवेश से रहित श्रद्धान सदा ही करना चाहिए; क्योंकि वह आत्मा का स्वरूप है।

अनेकान्तस्वरूप तत्त्वों का संशय, विपर्यय और अनध्यसाय रहित निर्णय करने का अध्यवसाय (प्रयास) अवश्य करना चाहिए; क्योंकि वह सम्यग्ज्ञान है और आत्मा का निजरूप है।

समस्त सावद्य के त्याग से होनेवाला, सम्पूर्ण कषायों से रहित, परपदार्थों से उदासीन, निर्मलचारित्र आत्मस्वरूप होता है।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की परिभाषा बतानेवाले उक्त तीनों छन्द का अंतिम पद '**आत्मरूपं तत्**' है, जो यह बताता है कि ये तीनों

आत्मरूप हैं, आत्मा के स्वरूप ही हैं।

इनकी आत्मरूपता इनके निश्चयस्वरूप को बताती है और शेष विशेषण इनके व्यवहाररूप को बतानेवाले हैं। इसप्रकार इन परिभाषाओं में निश्चय और व्यवहार दोनों प्रकार की परिभाषायें आ जाती हैं।

इसप्रकार इस गाथा में यह सुनिश्चित कर दिया गया है कि मुक्ति का कारण एक त्रिकाली ध्रुव निज भगवान आत्मा अथवा उसके आश्रय से उत्पन्न होनेवाली रत्नत्रयरूप परिणति है।

दर्शन-ज्ञान-चारित्र की एकता

(१९-२०)

णाणं चरित्तहीणं लिंगग्गहणं च दंसणविहूणं।
संजमहीणो य तवो जइ चरइ णिरत्थयं सव्वं।।
णाणं चरित्तसुद्धं लिंगग्गहणं च दसणविसुद्धं।
संजमसहिदो य तवो थोओ वि महाफलो होइ।।

(हरिगीत)

दर्शन रहित यदि वेष हो चारित्र विरहित ज्ञान हो।
संयम रहित तप निरर्थक आकाश-कुसुम समान हो।।
दर्शन सहित हो वेष चारित्र शुद्ध सम्यग्ज्ञान हो।
संयम सहित तप अल्प भी हो तदपि सुफल महान हो।।

चारित्रहीन ज्ञान निरर्थक है, सम्यग्दर्शन के बिना लिंग-ग्रहण अर्थात् नग्न दिगम्बर दीक्षा लेना निरर्थक है और संयम बिना तप निरर्थक है।

सम्यग्ज्ञान की सार्थकता तदनुसार आचरण करने में है। तप भी संयमी को ही शोभा देता है और साधुवेष भी सम्यग्दृष्टियों का ही सफल है।

चारित्र से शुद्ध ज्ञान, सम्यग्दर्शन सहित लिंगग्रहण एवं संयम सहित तप यदि थोड़ा भी हो तो महाफल देनेवाला होता है।

ये गाथायें अष्टपाहुड़ के शीलपाहुड़ की पाँचवीं-छठवीं गाथायें हैं। इन

गाथाओं में यह बताया गया है कि **चारित्र से रहित ज्ञान, सम्यग्दर्शन के बिना दिगम्बर वेष धारण करना और संयम बिना तप करना निरर्थक हैं, निष्फल हैं;** किसी काम के नहीं हैं।

यदि सम्यग्ज्ञान के साथ चारित्र हो, सम्यग्दर्शन सहित दिगंबर वेष हो और संयम के साथ तप हो; तो थोड़ा होने पर भी महान फल होता है।

तात्पर्य यह है कि मुक्ति की प्राप्ति सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान सहित चारित्र की पूर्णता से होती है।

परमार्थ को जाने बिना

(२१-२२)

परमट्ठम्हि दु अठिदो जो कुणदि तवं वदं च धारेदि।
तं सव्वं बालतवं बालवदं बेंति सव्वण्हू।।
वदणियमाणि धरंता सीलाणि तहा तवं च कुव्वंता।
परमट्ठबाहिरा जे णिव्वाणं ते ण विंदंति।।

(हरिगीत)

परमार्थ से हों दूर पर तप करें व्रत धारण करें।
सब बालतप है बालव्रत वृषभादि सब जिनवर कहें।।
व्रत नियम सब धारण करें तप शील भी पालन करें।
पर दूर हों परमार्थ से ना मुक्ति की प्राप्ति करें।।

परमार्थ में अस्थित अर्थात् निज भगवान आत्मा के अनुभव से रहित जो जीव तप करता है, व्रत धारण करता है; उसके उन व्रत और तप को सर्वज्ञ भगवान बालतप एवं बालव्रत कहते हैं।

तात्पर्य यह है कि सम्यग्दर्शन एवं सम्यग्ज्ञान बिना - आत्मानुभव के बिना किये गये व्रत और तप निरर्थक हैं।

शील और तप को करते हुए भी, व्रत और नियमों को धारण करते हुए भी जो जीव परमार्थ से बाह्य हैं, परमार्थ अर्थात् सर्वोत्कृष्ट पदार्थ निज

भगवान आत्मा के अनुभव से रहित हैं, उन्हें निर्वाण की प्राप्ति नहीं होती है। **निर्वाण की प्राप्ति आत्मानुभवियों को ही होती है।**

ये गाथायें समयसार के पुण्य-पापाधिकार में प्राप्त १५२वीं और १५३वीं गाथायें हैं। इनमें आत्मज्ञान की, आत्मध्यान की महिमा गाई जा रही है, बताई जा रही है।

यहाँ यह कहा जा रहा है कि जो जीव परमार्थ से बाह्य हैं अथवा परमार्थ में अस्थित हैं; त्रिकाली ध्रुव निज भगवान आत्मा को नहीं जानते हैं; उनके व्रत, नियम, तप, शील - सभी व्यर्थ हैं; क्योंकि उन्हें आत्मज्ञान बिना मात्र इनसे मुक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती।

तात्पर्य यह है कि आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यान से संयुक्त ज्ञानीजन व्रत, तप, शीलादि के बिना भी मुक्त होते देखे जाते हैं; परन्तु आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यान से शून्य अज्ञानीजन व्रतनियमादि का पालन करते हुए भी मुक्त नहीं होते; इसकारण यह सहज ही सिद्ध है कि **आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यानरूप आत्मज्ञान ही मुक्ति का एकमात्र हेतु है।**

यहाँ एक प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि यदि आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यान के सद्भाव में ज्ञानियों को व्रत, नियम, शील व तपादि के बिना भी मुक्ति प्राप्त हो सकती है तो फिर तो ज्ञानियों का विषय-व्यापार में प्रवृत्त होना भी पाप नहीं होगा; क्योंकि व्रत-नियमादि में विषय-व्यापार का ही तो त्याग होता है। विषय-व्यापार के त्याग का नाम ही तो व्रत है, नियम है, शील है।

आचार्य जयसेन ने स्वयं इसप्रकार का प्रश्न उपस्थित कर, इसका तर्कसंगत उत्तर दिया है; जो इसप्रकार है -

"**शंका -** व्रत, नियम, शील एवं बहिरंग तपश्चरणादिक के बिना भी यदि मोक्ष होता है तो फिर तो संकल्प-विकल्प रहित ज्ञानियों का विषय-व्यापार में रहना भी पाप नहीं होगा और यदि तपश्चरण के अभाव में भी मोक्ष होता है तो इससे तो सांख्य और शैवमत की ही सिद्धि होगी।

समाधान – यह कहना ठीक नहीं है; क्योंकि यह तो हम अनेक बार कह चुके हैं कि **निर्विकल्पत्रिगुप्तिसमाधिलक्षण भेदज्ञान सहित जीवों को मोक्ष होता है। इसप्रकार के भेदज्ञान के समय तो मन, वचन और काय का वह शुभरूप व्यापार भी नहीं रहता, जिसे परम्परा से मुक्ति का कारण कहा जाता है; तो फिर विषय-कषायरूप अशुभ व्यापार के होने का सवाल ही कहाँ रहता है?**

जिसप्रकार चावल के अंतरंग तुष (लालकण) के चले जाने पर बहिरंग तुष (छिलका) नहीं रह सकता; उसीप्रकार चित्त में स्थित रागभाव के नष्ट हो जाने पर बहिरंग विषय-व्यापार भी दिखाई नहीं देता।

जिसप्रकार परस्पर विरुद्धस्वभाववाले होने से जहाँ शीतलता होती है, वहाँ उष्णता नहीं होती और जहाँ उष्णता होती है, वहाँ शीतलता नहीं होती; उसीप्रकार परस्पर विरुद्धस्वभाववाले होने से जहाँ-जहाँ निर्विकल्प समाधिलक्षण भेदविज्ञान होता है, वहाँ विषय-कषायरूप व्यापार नहीं होता और जहाँ विषय-कषायरूप व्यापार होता है, वहाँ निर्विकल्प समाधिलक्षण भेदविज्ञान नहीं होता।''

तात्पर्य यह है कि मुक्ति का साक्षात् कारण तो शुद्धोपयोगरूप दशा है और शुद्धोपयोगरूप दशा में जब वह शुभोपयोग भी नहीं रहता, जिसे परम्परा से मुक्ति का कारण कहा जाता है; तो फिर अशुभोपयोग के रहने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। शुद्धोपयोग तो शुभोपयोग और अशुभोपयोग तथा शुभ प्रवृत्ति और अशुभ प्रवृत्ति – इन सभी के अभाव में उत्पन्न होनेवाली स्थिति है।

इसप्रकार इन गाथाओं में भी यही कहा गया है कि भले ही लौकिक जन व्रत-शील-संयम-तप आदि शुभभाव और शुभ क्रिया को मुक्ति का कारण मानते हों; पर सभी प्रकार के बालव्रत और बालतप मुक्ति के कारण नहीं हैं; एकमात्र – ज्ञान ही मुक्ति का कारण है। कहा भी है – **ज्ञानमात्रविहितं शिवहेतु।**

(क्रमशः)

छहढाला प्रवचन

सम्यग्ज्ञानपूर्वक चारित्र का उपदेश

सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि, दृढ चारित्र लीजै।
एकदेश अरु सकलदेश, तसु भेद कहीजै॥
त्रस हिंसा को त्याग, वृथा थावर न संहारै।
परवध कार कठोर निंद्य, नहिं वचन उचारै॥१०॥
जल मृतिका बिन और, नाहिं कछु गहै अदत्ता।
निज बनिता बिन सकल, नारि सौं रहैं विरत्ता॥
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै।
दश दिश गमन प्रमान ठान, तसु सीम न नाखैं॥११॥

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की चौथी ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

श्रावक को 'विरोधी हिंसा' होती है, उसका अर्थ यह नहीं है कि वह हिंसा करने जैसी है। श्रावक तो उसे भी छोड़ने योग्य मानता है; परन्तु अभी उस कषाय के अभाव योग्य शुद्धि नहीं प्रकटी, इसलिए वैसे परिणाम आ जाते हैं – इन्हें भी छोड़कर सम्पूर्ण अहिंसा रूप मुनिदशा कब हो – ऐसी भावना श्रावक को होती है।

२. सत्य अणुव्रत – वस्तु का स्वरूप जिसप्रकार सत् है, उसीप्रकार बराबर जाने तभी सत्यव्रत हो सकता है। इस आत्मा को ईश्वर ने बनाया है अथवा आत्मा सर्वथा क्षणिक है – ऐसे असत्य मानने वाले को सत्यव्रत नहीं होता। सम्यग्ज्ञानपूर्वक ही सत्यव्रत होता है। अनन्तानुबंधी की चार और अप्रत्याख्यान की चार – इसप्रकार आठ कषायों का अभाव होने पर जब विशेष शान्ति

प्रकट हुई, तब श्रावक को स्थूल असत्य के परिणाम नहीं होते, उसका नाम सत्याणुव्रत है। जिससे दूसरे को दु:ख हो, प्राणों का घात हो – ऐसे वचन वह नहीं बोलता। ऐसा सत्य भी नहीं बोलता, जिससे दूसरे की हिंसा हो।

३. अचौर्य अणुव्रत – सम्यग्दृष्टि श्रावक ज्ञानानन्द स्वरूप स्वद्रव्य के अलावा किसी भी परद्रव्य को अपना नहीं मानता तथा दिये बिना पर की वस्तु के ग्रहण करने के भाव उसके नहीं होते। अचौर्य अणुव्रतधारी श्रावक मार्ग में पड़ी दूसरे की वस्तु को नहीं उठाता।

४. ब्रह्मचर्य अणुव्रत – ब्रह्मस्वरूप आत्मा के सुख का अनुभव जिसको बढ गया है – ऐसा श्रावक अपनी विवाहित स्त्री के अतिरिक्त जगत की समस्त स्त्रियों से विरक्त होता है, उनके साथ अब्रह्म का विकल्प भी उसे नहीं आता। अपनी स्त्री में भी तीव्रासक्ति नहीं होती तथा भोगों में सुख तो वह मानता ही नहीं – ऐसा चौथा अणुव्रत है। पाँचवें गुणस्थान से पहले भी अभ्यासरूप से ब्रह्मचर्यादि का पालन होता है; परन्तु व्रतधारी श्रावक को तो ये नियमरूप होते हैं। वह मन-वचन-काय से उसमें दोष नहीं लगने देता। इस अणुव्रत को 'स्वदार-सन्तोषव्रत' भी कहते हैं।

५. परिग्रह-परिमाण अणुव्रत – ज्ञानी ने श्रद्धा-ज्ञान में तो समस्त परद्रव्य से अपनी आत्मा की भिन्नता जानी है, उसके बाद शुद्धता बढने पर राग के त्याग से धन-धान्य-वस्त्र-सोना आदि वस्तुओं के परिग्रह की मर्यादा हो जाती है, उसका नाम परिग्रह परिमाण है। इस व्रत का धारक श्रावक अपनी भूमिका तथा अपनी सामर्थ्य विचार कर जीवनभर निश्चित परिग्रह की ही मर्यादा करता है, उससे अधिक की वृत्ति उसके नहीं होती अर्थात् अन्य सबके प्रति अत्यन्त निस्पृहभाव हो जाता है।

इसप्रकार अहिंसादि पाँच अणुव्रत कहे। श्रावक को दो कषाय के अभावरूप शुद्धता होने पर ये पाँचों अणुव्रत एकसाथ होते हैं। इन व्रतों को

पुष्ट करनेवाली प्रत्येक व्रत की पाँच-पाँच भावनाओं का वर्णन मोक्षशास्त्र की टीका में विस्तार से है। भगवान के मार्ग में प्रत्येक प्रकार के सूक्ष्म परिणामों का वर्णन किया है, ऐसा वर्णन अन्यत्र कहीं नहीं है। सर्वज्ञदेव ने जहाँ-जहाँ त्रस जीव कहे हैं, अण्डा आदि में पंचेन्द्रिय जीव कहा है, अनछने पानी में क्षण-क्षण त्रस जीवों की उत्पत्ति कही है – उन सबको जानकर ही त्रस जीवों की हिंसा से बचा जा सकता है अर्थात् अहिंसा आदि का सूक्ष्म स्वरूप अरहन्तदेव के मार्ग में ही है। अरहन्तदेव के मार्ग की जिसे खबर नहीं उससे अहिंसादि का सच्चा पालन भी नहीं हो सकता, इसलिए वास्तव में सम्यग्ज्ञानपूर्वक ही सच्चा चारित्र होता है। ज्ञान बिना व्रतादि को 'बालव्रत' कहते हैं।

जीवों का जीवन-मरण तो उनके आयु कर्म के आधीन है; परन्तु व्रती जीव को कषाय का अभाव होने से वैसे हिंसादि का आरम्भ-परिणाम नहीं होता। किसी आरम्भ में एक भी त्रस जीव मरता दिखाई पड़े तो व्रतधारी श्रावक वैसा आरम्भ नहीं करता। कीड़ी मात्र के मारने में विपुल धन मिलता हो तो भी, जीवन के लोभ से भी, धर्मी जीव वैसी त्रसहिंसा का संकल्प नहीं करता। मैं इसे मारूँ – ऐसा विकल्प भी उसके मन में नहीं आता, तब वह अहिंसाव्रती कहा जाता है। **(क्रमश:)**

टोरंटो-कनाडा में डॉ. भारिल्ल

टोरंटो : यहाँ टोरंटो के नजदीक ब्रैम्पटन स्थित नवनिर्मित दिगम्बर जैन मंदिर में समाज के विशेष आग्रह पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल को आमंत्रित किया गया। आपके द्वारा दिनांक 9 से 15 जून तक प्रतिदिन भेदविज्ञान एवं आत्मानुभूति विषय पर हुये सारगर्भित मार्मिक प्रवचनों का भरपूर लाभ उपस्थित जैन समाज को मिला।

ज्ञातव्य है कि डॉ. हुकमंचदजी भारिल्ल विगत 35 वर्षों से प्रतिवर्ष दो माह विदेशों में तत्त्वप्रचारार्थ जाते हैं। इस वर्ष आपके द्वारा अमेरिका के अनेक नगरों में हुई धर्मप्रभावना के समाचार विगत अंक में प्रकाशित किये जा चुके हैं।

नियमसार प्रवचन –

शुद्ध आत्मा को कर्तृत्व का अभाव

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थप्रतिक्रमणाधिकार की गाथा ७७ से ८१ पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। गाथाएं मूलत: इसप्रकार हैं –

णाहं णारयभावो तिरियत्थो मणुवदेवपज्जाओ।
कत्ता ण हि कारइदा अणुमंता णेव कत्तीणं।।७७।।
णाहं मग्गणठाणो णाहं गुणठाण जीवठाणो ण।
कत्ता ण हि कारइदा अणुमंता णेव कत्तीणं।।७८।।
णाहं बालो वुड्ढो ण चेव तरुणो ण कारणं तेसिं।
कत्ता ण हि कारइदा अणुमंता णेव कत्तीणं।।७९।।
णाहं रागो दोसो ण चेव मोहो ण कारणं तेसिं।
कत्ता ण हि कारइदा अणुमंता णेव कत्तीणं।।८०।।
णाहं कोहो माणो ण चेव माया ण होमि लोहो हं।
कत्ता ण हि कारइदा अणुमंता णेव कत्तीणं।।८१।।

(हरिगीत)

मैं नहीं नारक देव मानव और तिर्यग मैं नहीं।
कर्ता कराता और मैं कर्तानुमंता भी नहीं।।७७।।
मार्गणास्थान जीवस्थान गुणथानक नहीं।
कर्ता कराता और मैं कर्तानुमंता भी नहीं।।७८।।
बालक तरुण बूढा नहीं इन सभी का कारण नहीं।
कर्ता कराता और मैं कर्तानुमंता भी नहीं।।७९।।
मैं मोह राग द्वेष न इन सभी का कारण नहीं।
कर्ता कराता और मैं कर्तानुमंता भी नहीं।।८०।।
मैं मान माया लोभ एवं क्रोध भी मैं हूँ नहीं।
कर्ता कराता और मैं कर्तानुमंता भी नहीं।।८१।।

नरक पर्याय, तिर्यंच पर्याय, मनुष्य पर्याय और देव पर्यायरूप मैं नहीं हूँ। इन पर्यायों का करनेवाला, करानेवाला और करने-कराने की अनुमोदना करनेवाला भी मैं नहीं हूँ।

मार्गणास्थान, गुणस्थान और जीवस्थान भी मैं नहीं हूँ। इनका करनेवाला, करानेवाला और करने-कराने की अनुमोदना करनेवाला भी मैं नहीं हूँ।

मैं बालक, वृद्ध या जवान भी नहीं हूँ और इन तीनों का कारण भी नहीं हूँ। उन तीनों अवस्थाओं का करनेवाला, करानेवाला और करने-कराने की अनुमोदना करनेवाला भी मैं नहीं हूँ।

मैं मोह, राग और द्वेष नहीं हूँ, इनका कारण भी नहीं हूँ। इनका करनेवाला, करानेवाला और करने-कराने की अनुमोदना करनेवाला भी मैं नहीं हूँ।

मैं क्रोध, मान, माया और लोभ भी नहीं हूँ। इनका करनेवाला, करानेवाला और करने-कराने की अनुमोदना करनेवाला भी मैं नहीं हूँ।

(गतांक से आगे....)

यहाँ कोई **प्रश्न** करे कि भगवान ने जिस दिन देखा हो, उसी दिन तो स्वभाव सन्मुखता की भावना भायेगा?

उत्तर :– भगवान ने ऐसा देखा है, इसप्रकार भगवान का अस्तित्व और उनके सर्वज्ञपने का निर्णय किस साधन से करेगा? 'भगवान हैं', मात्र इतने से यथार्थ प्रतीति नहीं होती। किसी निमित्त, विकल्प या पर्याय के आधार से अथवा अल्पज्ञता के आधार से सर्वज्ञ का निर्णय हो सकता। 'अल्पज्ञ सर्व नहीं जानता है, सर्वज्ञ सर्व जानता है' – ऐसा भरोसा कहाँ से और किसमें से आवेगा? निमित्त या राग में से वह भरोसा नहीं आता। जिस पर्याय में सर्वज्ञता प्रगट नहीं है, अल्पज्ञता है, उस पर्याय के आधार से भी भरोसा नहीं आ सकता; 'अपना आत्मा सर्वज्ञस्वभावी है' – ऐसे श्रद्धान-ज्ञान से भरोसा आता है। यह निर्णय करे कि मेरी अल्पज्ञ पर्याय रहनी नहीं चाहिए; किन्तु जैसे भगवान ने सर्वज्ञपद प्रगट किया है वैसे ही

मैं भी आत्मा हूँ, अतः मेरे आश्रय से मेरे में से सर्वज्ञपर्याय होनी चाहिए। इस प्रकार जिसे अपने आत्मा की सर्वज्ञशक्ति का भरोसा आया है, उसी ने भगवान को यथार्थ माना है। मैं पर्याय में सर्वज्ञ नहीं और सर्वज्ञपद प्रगट करूँगा – ऐसा भेद स्वभाव में नहीं है। वर्तमान में परिपूर्ण हूँ – ऐसे चैतन्यस्वभावी आत्मा की भावना भाना, वह प्रतिक्रमण है और वही धर्मदशा तथा मोक्षमार्ग है। अपने सर्वज्ञशक्तिवाले आत्मा की प्रतीति बिना भगवान की श्रद्धा सच्ची नहीं, इसलिए 'भगवान ने जैसा देखा होगा वैसा ही होगा' इसप्रकार पर के ऊपर डालकर जो जीव स्वभाव की श्रद्धा नहीं करता, उसे अपने आत्मा अथवा भगवान की खबर नहीं है। धर्मीजीव क्रोधादि कषायों को नहीं करता, शुद्धचैतन्यस्वरूपी आत्मा को भाता है।

मैं भावकर्मात्मक क्रोध-मान-माया-लोभ कषायों को नहीं करता, उनके ऊपर मेरा लक्ष्य नहीं है। मैं निमित्त, विकल्प या पर्याय को नहीं भाता; किन्तु सहज चैतन्यस्वरूप आत्मा को भाता हूँ। निमित्त के पास जाना या निमित्त को मिलाना, यह बात तो है ही नहीं; किन्तु क्रोधादि के भेद को भी मैं नहीं करता। शुद्धस्वभाव को सम्यग्दृष्टि अपनी भूमिकानुसार भाता है तथा विशेष स्थिरतावाला जीव श्रद्धा-उपरान्त अन्तर्लीनता को भाता है।

यहाँ टीका में जैसे कर्त्ता के विषय में वर्णन किया वैसे ही आत्मा भेदों का कराने वाला तथा यह भेद पड़े तो ठीक, इसप्रकार अनुमोदन करनेवाला भी नहीं है। किसी भी भेद को करना, कराना या अनुमोदना करना वस्तुस्वभाव में है ही नहीं, इसलिए धर्मीजीव स्वभाव की एकाग्रता को भाता है। **(क्रमशः)**

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो – वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें –
वेबसाईट – www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र–श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

समयसार कलश 262

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को इसी अंक से क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है। भूमिका के रूप में समयसार कलश 262 व 263 से प्रारम्भ किया गया प्रकरण पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत है।

(गतांक से आगे....)

आत्मा लक्ष्य है और ज्ञान उसका लक्षण है। यह जानने के बाद शिष्य पूछता है कि ''इस लक्षण की प्रसिद्धि से किस प्रयोजन की सिद्धि होती है? जब मात्र लक्ष्य ही प्रसाध्य है, प्रसिद्धि करने योग्य है तो फिर लक्षण को प्रसिद्ध किए बिना मात्र लक्ष्य को ही प्रसिद्ध क्यों नहीं कर लेते? 'ज्ञान ही आत्मा है' – ऐसा लक्षण-लक्ष्य का भेद करने से क्या प्रयोजन है?

जिसको लक्षण अप्रसिद्ध हो उसको लक्ष्य की प्रसिद्धि नहीं होती। जिसको ज्ञान लक्षण से लक्ष्य का भान हो चुका है, उसे तो अब लक्ष्य-लक्षण के भेद से प्रयोजन नहीं रहा; परन्तु जिसको लक्ष्य की अर्थात् आत्मा की खबर ही नहीं है उसे तो यथार्थ लक्षण के द्वारा लक्ष्य की पहचान जरूरी है न! क्योंकि जिसे लक्षण की पहचान हो, उसे ही लक्ष्य की प्रसिद्धि होती है। अज्ञानी को लक्षण अप्रसिद्ध है। वह देह को व रागादि को आत्मा मानता है। अतः यथार्थ लक्षण की पहचान अत्यावश्यक है।

ज्ञान ही आत्मा का लक्षण है; क्योंकि आत्मा सदा ज्ञानस्वरूप है और ज्ञान से पहचाना जाता है। ज्ञान को अन्तर्मुख करके उसके आत्मवस्तु से एक होने पर आत्मा पहचाना जाता है, प्रसिद्ध होता है – इसप्रकार ज्ञानलक्षण की प्रसिद्धि द्वारा आत्म लक्ष्य की प्रसिद्धि होती है।

देखो, यहाँ जो लक्ष्य-लक्षण का भेद किया है, वह लक्ष्य में अटकने

के लिए नहीं किया है; परन्तु अभेद आत्मा का लक्ष्य करने के लिए किया है। भेदों को गौण करके जो अभेद का लक्ष्य करता है, उसे अभेद आत्मा की प्रसिद्धि होती है। जब अभेद आत्मा की उपलब्धि हो जाती है, तब जिस भेद को गौण करके अभेद में जाता है, उसके उस व्यवहार को ही वास्तविक व्यवहार कहते हैं। जो व्यवहार में ही अटका रहे, उसे आत्मप्रसिद्धि तो होती ही नहीं, उसका वह व्यवहार भी यथार्थतः व्यवहार नाम नहीं पाता है।

यदि कोई अज्ञानी कहे कि – 'ज्ञान-ज्ञान' क्या करते हो? पुण्य का उदय हो और हम बाह्य साधना करें तो वे भी तो आत्मा को जानने में साधन बन सकते हैं? उनके द्वारा भी तो आत्मा की पहचान हो सकती है?

नहीं, ऐसा कभी नहीं होता। भाई! देह की क्रिया और पुण्य की क्रियायें या पुण्य का उदय आत्मा को पहचानने के साधन नहीं हैं। **एकमात्र ज्ञान लक्षण से ही आत्मा की पहचान संभव है – ऐसा कहकर आचार्यदेव ने व्यवहाराभास का निषेध किया है।**

प्रश्न – निश्चयाभास का निषेध करने के लिए आचार्य कहते हैं कि यदि कोई ऐसा कहे कि लक्ष्य-लक्षण का भेद किसलिए करते हो। सीधा आत्मा ही बता दो न!

उत्तर – जो लक्षण को नहीं जानता, वह लक्ष्य को भी नहीं जानता। लक्षण की पहचान से ही लक्ष्य की पहचान हो सकती है। इसप्रकार ज्ञान लक्षण से ही आत्मा लक्षित होता है – ऐसा कहकर निश्चयाभास का निषेध किया है।

(क्रमशः)

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

26 अग.से 6 सित.	भोपाल (कोहेफिजा)	दशलक्षण पर्व
17 से 24 सितम्बर	जयपुर	शिक्षण शिविर
1 से 5 अक्टूबर	श्रवणबेलगोला	विद्वत् सम्मेलन
15 से 19 अक्टूबर	देवलाली	दीपावली

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : जैसा भाव करे वैसा होता है या जो होना होता है वह होता है ?

उत्तर : होना हो वही होता है, परन्तु करता है इसलिये होता है। जो होनेवाला था, उसका कर्त्ता होकर करता है। वास्तव में तो जो स्वभाव का निर्णय करे उसको जो होना था, सो हुआ। ज्ञायक स्वभाव की दृष्टि करे तभी होना होगा, वही होगा, इसप्रकार सम्यक्‌निर्णय होता है।

प्रश्न : होना होगा तो होगा, ऐसा मानने पर पुरुषार्थ निर्बल पड़ जाता है न ?

उत्तर : जब पर्याय का लक्ष्य द्रव्य के ऊपर जाये तब सम्यक् निर्णय होता है; अत: होना होगा, वही होगा – ऐसा स्वीकारने में विशेष पुरुषार्थ है।

प्रश्न : जब आत्मा ज्ञायक ही है तो फिर और क्या करना ?

उत्तर : भाई ! तू ज्ञायक ही है – ऐसा निर्णय कर ! ज्ञायक तो है; परन्तु उस ज्ञायक का निर्णय नहीं है। वह निर्णय तुझे करना है। पुरुषार्थ करूँ.. करूँ.. परन्तु यह पुरुषार्थ तो द्रव्य में भरा है। बस, द्रव्य के ऊपर लक्ष्य जाते ही वह पुरुषार्थ प्रकट हो जाता है। जब द्रव्य के ऊपर लक्ष्य जाता है, तब सभी कुछ जैसा है, वैसा है, इसप्रकार मात्र जानता है। पर का तो कुछ पलटना है नहीं और स्व का भी कुछ पलटना नहीं है। स्व का निर्णय करते ही दिशा पलट जाती है।

प्रश्न : पर्याय तो व्यवस्थित ही होनेवाली है अर्थात् पुरुषार्थ की पर्याय तो जब उसके प्रकट होने का काल आयेगा तभी प्रकट होगी – ऐसी स्थिति में अब करने को क्या रह गया ?

उत्तर : व्यवस्थित पर्याय द्रव्य में है; अत: द्रव्य के ऊपर दृष्टि करना है, पर्याय के क्रम के ऊपर दृष्टि न करके क्रमश: पर्याय जिसमें से प्रकट होती है – ऐसे द्रव्य सामान्य के ऊपर दृष्टि करनी है; क्योंकि उसपर दृष्टि करने में अनंत पुरुषार्थ आ

जाता है। क्रमबद्ध के सिद्धान्त से अकर्तापना सिद्ध होता है।

प्रश्न : सभी गुणों का कार्य व्यवस्थित ही है तो फिर पुरुषार्थ क्या करना ?

उत्तर : जिसको क्रमबद्धपर्याय की श्रद्धा में पुरुषार्थ भासित ही नहीं होता, उसको व्यवस्थितपना बैठा ही कहाँ है ?

प्रश्न : उसको व्यवस्थितपने का श्रद्धान नहीं हुआ तो उसका वैसा परिणमन भी तो व्यवस्थित ही है। वह व्यवस्थितपने का निर्णय नहीं कर सका - यह बात भी तो व्यवस्थित ही है। ऐसी दशा में निर्णय करने की कथा कहना व्यर्थ ही है।

उत्तर : उसका परिणमन व्यवस्थित ही है - ऐसी उसे खबर कहाँ है ? परिणमन व्यवस्थित है - यह तो सर्वज्ञ ने कहा है; परन्तु उसे सर्वज्ञ का भी निर्णय कहाँ है ? प्रथम वह सर्वज्ञ का निर्णय करे, पश्चात् उसे व्यवस्थितपने की खबर हो।

प्रश्न : वस्तु व्यवस्थित परिणमनशील है, इसप्रकार भगवान के कथन की श्रद्धा तो उसे है ?

उत्तर : नहीं ! सर्वज्ञ भगवान का सच्चा निर्णय भी उसको नहीं है; क्योंकि सर्वज्ञ का निर्णय हुये बिना व्यवस्थितपने का निर्णय कहाँ से हो ? मात्र ज्ञानी की बातें सुन-सुनकर वैसा का वैसा ही कहे तो इससे काम नहीं चलेगा। प्रथम सर्वज्ञ का निर्णय तो करो। द्रव्य का निर्णय किये बिना सर्वज्ञ का निर्णय वास्तव में हो ही नहीं सकता।

प्रश्न : क्रमबद्ध मानने पर करने के लिये क्या है?

उत्तर : करना है कहाँ? करने में तो कर्तृत्वबुद्धि आती है। करने की बुद्धि छूट जाये सो क्रमबद्ध है। यह जीव पर में तो कुछ कर नहीं सकता और अपने में भी जो होनेवाला है, वही होता है अर्थात् अपने में राग होना है तो होगा, उसमें करना क्या? राग में से कर्तृत्वबुद्धि छूट गई, भेद और पर्याय से भी दृष्टि हट गई; तब क्रमबद्ध की प्रतीति हुई। क्रमबद्ध की प्रतीति में ज्ञातादृष्टापना है। जहाँ निर्मल पर्याय को करने की बुद्धि भी मिट गई है, वहाँ राग को करूँ - यह बात कैसे होगी?

समाचार दर्शन -

40वाँ आध्यात्मिक शिक्षण शिविर संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट' मुम्बई द्वारा दिनांक 23 जुलाई से 1 अगस्त 2017 तक होने वाले 40वें आध्यात्मिक शिक्षण शिविर अनेक मांगलिक आयोजनों सहित सम्पन्न हुआ।

शिक्षण शिविर का उद्घाटन श्री आई.एस. जैन मुम्बई के करकमलों से हुआ। इस अवसर पर सभा की अध्यक्षता श्री अजितजी जैन बड़ौदा ने की। मुख्य अतिथि के रूप में श्री सुशीलकुमारजी गोदीका एवं श्री कन्हैयालालजी दलावत उपस्थित थे। विद्वत्गणों के अन्तर्गत डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के साथ-साथ पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित प्रदीपजी झांझरी उज्जैन, पण्डित रजनीभाई हिम्मतनगर, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड, श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा आदि अनेक विद्वत्गण मंचासीन थे।

श्री कुन्दकुन्द कहान दि.जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट का परिचय ट्रस्ट के ट्रस्टी श्री महीपालजी ज्ञायक बांसवाड़ा ने दिया। मंचासीन समस्त अतिथियों का सम्मान शिविर के ट्रस्टी श्री अशोकजी जैन जबलपुर एवं श्री आलोकजी कानपुर ने तिलक लगाकर एवं माल्यार्पणकर किया।

उद्घाटन सभा के पूर्व शिविर मण्डप का उद्घाटन श्री निहालचंदजी जैन जयपुर ने, मंच का उद्घाटन श्री दिलीपभाई बेलजी शाह मुम्बई ने, शिविर उद्घाटन श्रीमती दीपिकाबेन अनिलभाई दोशी मुम्बई ने एवं ध्वजारोहण श्री सूरजमलजी जैन रामगंजमण्डी ने किया। इसके अतिरिक्त पण्डित टोडरमलजी के चित्र अनावरणकर्त्ता श्री अभयकुमारजी सेठिया सरदारशहर एवं गुरुदेवश्री के चित्र अनावरणकर्त्ता श्री विजयजी कौशल छिन्दवाड़ा थे।

इस अवसर पर डॉ. भारिल्ल ने जैनदर्शन शास्त्री के अध्ययन का महत्व व उपयोगिता बताते हुए कहा कि सभी महाविद्यालय ज्ञानयज्ञ के माध्यम से वीतरागी तत्त्वज्ञान जन-जन तक पहुंचायें। कार्यक्रम का संचालन श्री ब्र.जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली ने किया।

शिक्षण शिविर में प्रतिदिन प्रात: 8.45 से 9.15 बजे तक गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के मांगलिक सी.डी. प्रवचन के साथ-साथ डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा प्रात:काल प्रवचनसार पर प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त पण्डित प्रदीपजी झांझरी उज्जैन, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित रजनीभाई दोशी हिम्मतनगर के प्रवचनों का भी लाभ प्राप्त हुआ।

प्रतिदिन चलने वाली प्रौढ कक्षाओं में पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा द्वारा समयसार,

ब्र.जतीशचंदजी शास्त्री द्वारा छहढाला, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर द्वारा समयसार, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा नयचक्र, पण्डित अरुणजी बण्ड व ब्र.जतीशचंदजी द्वारा मोक्षमार्गप्रकाशक, पण्डित अनिलजी शास्त्री खनियांधाना द्वारा तत्त्वार्थसूत्र की कक्षा ली गई। सायंकाल पण्डित प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा द्वारा गुणस्थान विवेचन एवं बालकक्षा पण्डित अशोककुमारजी जैन उज्जैन द्वारा ली गई।

दोपहर की सभा में प्रतिदिन बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' के सी.डी. प्रवचन के पश्चात् महाविद्यालय के छात्र विद्वानों द्वारा प्रवचन तदुपरान्त आयोजित व्याख्यानमाला में पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड, डॉ. नीतेशजी शाह दुबई, डॉ. भागचन्दजी शास्त्री जयपुर आदि विद्वानों के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ।

प्रात:कालीन प्रौढ कक्षाओं में पण्डित पण्डित सुरेशचंदजी टीकमगढ, पण्डित गुलाबचंदजी बीना, पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा इत्यादि विद्वानों के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ। इसके उपरान्त 6.30 बजे से 7.00 बजे तक प्रतिदिन जी-जागरण चैनल पर आने वाले समयसार ग्रन्थ पर डॉ. भारिल्ल के प्रवचनों का प्रसारण एवं 7.00 बजे से 7.20 तक अरिहंत चैनल पर आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के प्रवचनों का प्रसारण हुआ।

इस अवसर पर श्री पंचकल्याणक मंडल विधान का आयोजन किया गया। विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित अशोककुमारजी उज्जैन, पण्डित कांतिकुमारजी, रमेशजी इन्दौर के साथ टोडरमल महाविद्यालय के छात्रों ने संपन्न कराये।

शिक्षण शिविर के समस्त कार्यक्रम श्री महीपालजी ज्ञायक बांसवाड़ा एवं श्री अशोकजी जबलपुर के निर्देशन में संपन्न हुये। दिनांक 01 अगस्त को श्री अशोकजी जबलपुर ने सभी विद्वानों एवं शिविरार्थियों व महाविद्यालय के विद्यार्थियों का सहयोग हेतु आभार प्रदर्शन किया। ●

ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण रहस्यपूर्ण चिट्ठी का विमोचन

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में शिक्षण शिविर के अवसर पर दिनांक 28 जुलाई को आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी द्वारा मुलतान हेतु लिखी गई उन्हीं के हस्तलेख में ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण मूल रहस्यपूर्ण चिट्ठी का विमोचन तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा किया गया। ज्ञातव्य है कि अभी तक निम्न ग्रंथ ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण हो चुके हैं - समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड, पंचास्तिकाय, तत्त्वार्थसूत्र, इष्टोपदेश, मोक्षमार्गप्रकाशक, समयसार कलश, षट्खण्डागम पुस्तक 1 व 3, रहस्यपूर्ण चिट्ठी। षट्खण्डागम की शेष पुस्तकों पर कार्य प्रगति पर है। **संपर्क सूत्र-** पण्डित मनोजकुमार जैन (चीनी वाले) 7599301008

तत्त्वप्रचार के क्षेत्र में -

सोश्यल मीडिया के बढते कदम

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 23 जुलाई से 1 अगस्त तक आयोजित शिक्षण शिविर का लाभ देश-विदेश के हजारों साधर्मियों ने सोश्यल मीडिया के माध्यम से लिया; यह इस शिविर की विशेष उपलब्धि रही।

इसके अन्तर्गत यू-स्ट्रीम पर 1145 लोगों ने, मोबाइल द्वारा कॉन्फ्रेन्स सुविधा के अन्तर्गत 1300 लोगों ने (प्रतिदिन 600 मिनिट), यू-ट्यूब पर 45000 लोगों ने (लगभग 7 लाख मिनिट) शिविर के कार्यक्रमों का लाभ लिया। फेसबुक के माध्यम से भी हजारों लोगों तक शिविर के कार्यक्रम पहुंचे। इसके अतिरिक्त वाट्सअप पर डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के समयसार पर प्रवचनों का लाभ लगभग 5400 लोग प्रतिदिन ले रहे हैं।

सभी साधर्मीजन टोडरमल स्मारक भवन में होने वाले प्रत्येक कार्यक्रम को देखने-सुनने के लिये - **(1) मोबाइल से फोन लगाकर -** आपको अपने मोबाइल से 7400130777 इस नम्बर पर कॉल लगाना है, वह एक एक्सेस कोड पूछेगा, तक 998800# दबाना है। कॉल की दर सामान्य सबके अपने-अपने प्लान के अनुसार रहेगी।

(2) यू-ट्यूब पर जाएं और सर्च करें **PTST** वहाँ आपको पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का यू-ट्यूब चैनल मिल जायेगा, जिसमें प्लेलिस्ट पर जाकर आप व्यवस्थित क्रम से अध्ययन कर सकते हैं। हर वीडियो की डिस्क्रिप्शन के नीचे एक लिंक दी गई है, जिस पर क्लिक करके उस विषय से संबंधित ग्रंथ की पीडीएफ डाउनलोड की जा सकती है।

www.youtube.com/user/todarmalsmaraktrust

ऊपर दी गई लिंक पर सबस्क्राइब करें और उसके बगल में बेल आइकॉन पर क्लिक करना न भूलें। इससे आपको निरंतर अपडेट मिलते रहेंगे।

(3) जैनधर्म को **basic** से सीखने के लिये निम्न यू-ट्यूब चैनल की **Playlist** से बालबोध प्रवचनों को क्रमश: **follow** करें। **www.youtube.com/c/drsanjeevgodha**

(4) फेसबुक के माध्यम से - www.facebook.com/ptst.jaipur

(5) यू-स्ट्रीम से लाइव भी देख सकते हैं - www.ustream.tv/channel/ptst

वैराग्य समाचार

विदिशा (म.प्र.) निवासी श्रीमती कमलाबाई जैन का दिनांक 22 जुलाई को देहावसान हो गया। ज्ञातव्य है कि आप पण्डित ज्ञानचन्दजी विदिशा की धर्मपत्नी एवं प्रमोदजी, विनोदजी 'चिन्मय', मुकेशजी 'तन्मय', शुद्धात्मप्रकाशजी व अध्यात्मप्रकाशजी की माताजी थीं। आप अत्यंत स्वाध्यायी एवं तत्त्वरसिक महिला थीं। आपने अनेक वर्षों तक आध्यात्मिक शिविरों में तत्त्वज्ञान का लाभ लिया था।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो - यही मंगल भावना है।

साप्ताहिक गोष्ठियों में –

निमित्त-उपादान एवं रक्षाबंधन पर गोष्ठी

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में शिक्षण शिविर के अवसर पर **दिनांक 1 अगस्त** को महाविद्यालय के छात्रों द्वारा 'निमित्त-उपादान' विषय पर गोष्ठी संपन्न हुई। गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा ने की। विशिष्ट अतिथियों के रूप में पण्डित प्रमोदजी शास्त्री शाहगढ एवं श्री सुभाषजी सांगली रहे। श्रेष्ठ वक्ताओं में मयंक जैन (शास्त्री प्रथम वर्ष) और श्रुति जैन (शास्त्री द्वितीय वर्ष) रहे। गोष्ठी का संचालन आकाश जैन अमायन व पारस जैन खेकड़ा ने किया।

दिनांक 7 अगस्त को रक्षाबंधन पर्व के अवसर पर 'रक्षाबंधन' विषय पर गोष्ठी आयोजित की गई, जिसकी अध्यक्षता डॉ. राजेशकुमारजी विदिशा ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में संयम जैन गुढाचन्द्रजी (उपाध्याय वरिष्ठ) एवं भविक जैन सिरसा (उपाध्याय वरिष्ठ) रहे। गोष्ठी का संचालन शशांक जैन दलपतपुर व दिवस जैन छिन्दवाड़ा ने एवं आभार प्रदर्शन पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री ने किया।

अनेक विद्यार्थियों ने गोष्ठियों से संबंधित निबंध, कविता आदि संस्कृत व हिन्दी में लिखकर दिये, जिन्हें पुरस्कृत किया गया।

परिचय सम्मेलन संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय में सत्र 2017-18 का परिचय सम्मेलन दिनांक 6 अगस्त को तीन सत्रों में संपन्न हुआ।

प्रथम सत्र में अध्यक्षता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने, **द्वितीय सत्र** में डॉ. संजीवजी गोधा एवं **तृतीय सत्र** में पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने की। इसके अतिरिक्त पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, ब्र. यशपालजी जैन, श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल, डॉ. महावीरप्रसादजी शास्त्री उदयपुर, डॉ. राजेशजी शास्त्री विदिशा, पण्डित पीयूषजी शास्त्री, पण्डित अनेकान्तजी भारिल्ल, श्रीमती कमला भारिल्ल, श्रीमती गुणमाला भारिल्ल, पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री, पण्डित अच्युतकांतजी शास्त्री, पण्डित गौरवजी शास्त्री, पण्डित जिनेन्द्रजी शास्त्री आदि महानुभाव भी मंचासीन थे।

सभी छात्रों ने अपना-अपना परिचय प्रस्तुत करते हुए किसकी प्रेरणा से आये हैं व क्या उद्देश्य है – यह भी स्पष्ट किया। सभी अतिथियों ने महाविद्यालय को विश्व का सर्वश्रेष्ठ विद्यालय व छात्रों को सर्वश्रेष्ठ छात्र कहा, क्योंकि सभी लौकिक शिक्षा के साथ आध्यात्मिक शिक्षा के माध्यम से जीवन का सर्वश्रेष्ठ कार्य कर रहे हैं। कार्यक्रम का संचालन आकाश जैन अमायन ने एवं आभार प्रदर्शन जिनकुमारजी शास्त्री ने किया।

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2015-17*

तीर्थधाम मंगलायतन जिनायतन में विराजमान होने वाली 1143 प्रतिमाएँ

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी
सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**